अस्त्र के लिये ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं में से भी कोई अवध्य नहीं है, उस परम उत्तम आश्चर्यमय पशुपतास्त्र को मैंने यहाँ प्रत्यक्ष देखा था। त्रिशूलधारी भगवान् शंकर का सम्पूर्ण लोकों में विख्यात जो वह त्रिशूल नामक अस्त्र है, वह शूलपाणि शंकर के द्वारा छोड़े जानेपर इस सारी पृथ्वी को विदीर्ण कर सकता है, महासागर को सुखा सकता है अथवा समस्त संसार का संहार कर सकता है। श्रीकृष्ण! पूर्वकाल में त्रिलोकविजयी, इन्द्रतुल्य पराक्रमी चक्रवर्ती राजा मान्धाता लवणासुर के द्वारा प्रयुक्त हुए उस शूल से सेना सहित नष्ट हो गये थे। गोविन्द! भगवान् रुद्र के निकट मैंने उसका भी दर्शन किया था। पूर्वकाल में महादेवजी ने संतुष्ट होकर परशुराम को जिसका दान किया था और जिसके द्वारा महासमर में चक्रवर्ती राजा कार्तवीर्य अर्जुन मारा गया था, क्षत्रियों का विनाश करनेवाला वह तीखी धार से युक्त परशु[1] मुझे भगवान् रुद्र के निकट दिखायी दिया था। गोविन्द! जमदग्निनन्दन परशुराम ने उसी परशु के द्वारा इक्कीस बार इस पृथ्वी को क्षत्रियों से शून्य कर दिया था। वह सर्पयुक्त कण्ठवाले महादेवजी के कण्ठ के अग्रभाग में स्थित था। निष्पाप श्रीकृष्ण! बुद्धिमान् भगवान् शिव के असंख्य दिव्यास्त्र हैं। मैंने यहाँ आपके सामने इन प्रमुख अस्त्रों का वर्णन किया है।

उस समय महादेवजी के दाहिने भाग में लोकपितामह ब्रह्मा हंसयुक्त दिव्य विमान पर बैठे हुए शोभा पा रहे थे और बायें भाग में शंख, चक्र और गदा धारण किये भगवान् नारायण गरुड़ पर विराजमान थे। कुमार स्कन्द मोर पर चढ़कर हाथ में शक्ति और घंटा लिये पार्वतीदेवी के पास ही खड़े थे। महादेवजी के आगे मैंने नन्दी को उपस्थित देखा, जो शूल उठाये दूसरे शंकर के समान खड़े थे। स्वायम्भुव आदि मनु, भृगु आदि ऋषि तथा इन्द्र आदि देवता–ये सभी वहाँ पधारे थे। समस्त भूतगण और नाना प्रकार की मातृकाएँ उपस्थित थीं। वे सब देवता महात्मा महादेवजी को चारों ओर से घेरकर नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा उनकी स्तुति कर रहे थे। ब्रह्माजी ने रथन्तर सामका उच्चारण करके उस समय भगवान् शंकर की स्तुति की। नारायण ने ज्येष्ठसाम द्वारा देवेश्वर शिव की महिमाका गान किया। इन्द्र ने उत्तम शतरुद्रिय का सस्वर पाठ करते हुए परब्रह्म शिव का स्तवन किया। ब्रह्मा, नारायण और देवराज इन्द्र– इन तीनों के बीच में विराजमान भगवान् शिव शरद्ऋतु के बादलों के आवरण से मुक्त हो परिधि(घेरे) में स्थित हुए सूर्यदेव के समान शोभा पा रहे थे। केशव! उस समय मैंने आकाश में सहस्रों चन्द्रमा और सूर्य देखे। तदनन्तर मैं सम्पूर्ण जगत् के पालक महादेवजी की स्तुति करने लगा।

(उपमन्यु द्वारा की गयी स्तुति के कुछ अंशों को हम यहाँ प्रस्तुत करेंगे।)

नमः श्यामाय गौराय अर्धपीतार्धपाण्डवे।
नारीनरशरीराय स्त्रीपुंसाय नमोऽस्तु ते।। (298)

आप हरिहररूप होने के कारण आधे शरीर से सांवले और आधे से गोरे हैं। आधे शरीर में

1. परशुराम की जिस स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् शिव ने यह दिव्य परशु एवं अन्य अस्त्र–शस्त्र प्रदान किया था उसका वर्णन इस पुस्तक में अन्यत्र किया गया है।

पीताम्बर धारण करते हैं और आधे में श्वेत वस्त्र पहनते हैं। आपको नमस्कार है। आप के आधे शरीर में नारी के अवयव हैं और आधे में नर के। आप स्त्री-पुरुषरूप हैं। आपको नमस्कार है।

शंयोरभिस्रवन्ताय अथर्वाय नमो नमः।
नमः सर्वार्तिनाशाय नमः शोकहराय च।।
नमो मेघनिनादाय बहुमायाधराय च।
बीजक्षेत्राभिपालाय स्रष्ट्राय नमो नमः।।
नमः सुरासुरेशाय विश्वेशाय नमो नमः।
नमः पवनवेगाय नमः पवनरूपिणे।। (309-311)

आप यज्ञपूरक 'शंयु' नामक देवता के प्रसादरूप हैं और अथर्ववेदस्वरूप हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। जो सबकी पीड़ा का नाश करनेवाले और शोकहारी हैं, उन्हें नमस्कार है, नमस्कार है। जो मेघ के समान गम्भीर नादकरनेवाले तथा बहुसंख्यक मायाओं के आधार हैं, जो बीज और क्षेत्रका पालन करते हैं और जगत् की सृष्टि करनेवाले हैं, उन भगवान् शिव को बारंबार नमस्कार है। आप देवताओं और असुरों के स्वामी हैं। आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण विश्व के ईश्वर हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। आप वायु के समान वेगशाली और वायुरूप हैं। आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

ईशानाय भवघ्नाय नमोऽस्त्वन्धकघातिने।
नमो विश्वाय मायाय चिन्त्याचिन्त्याय वै नमः।। (316)

आप सबके ईश्वर, संसार-बन्धन का नाश करनेवाले तथा अन्धकासुर के घातक हैं। आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण मायास्वरूप तथा चिन्त्य और अचिन्त्यरूप हैं। आपको नमस्कार है।

आत्मा च सर्वभूतानां सांख्ये पुरुष उच्यते।
ऋषभस्त्वं पवित्राणां योगिनां निष्कलः शिवः।। (318)

आप समस्त प्राणियों में आत्मा और सांख्यशास्त्र में पुरुष कहलाते हैं। आप पवित्रों में ऋषभ तथा योगियों में निष्कल शिवरूप हैं।

आदिस्त्वमसि लोकानां संहर्ता काल एव च।
यच्चान्यदपि लोके वै सर्वतेजोऽधिकं स्मृतम्।।
तत् सर्वं भगवानेव इति में निश्चिता मतिः।
नमस्ते भगवन् देव नमस्ते भक्तवत्सल।।
योगेश्वर नमस्तेऽस्तु नमस्ते विश्वसम्भव। (326-328)

आप ही सम्पूर्ण लोकों के आदि हैं। आप ही संहार करनेवाले काल हैं। संसार में और भी जो-जो वस्तुएँ सर्वथा तेज में बढ़ी-चढ़ी हैं, वे सभी आप भगवान् ही हैं-यह मेरी निश्चित धारणा है। भगवन्! देव! आपको नमस्कार है। भक्तवत्सल! आपको नमस्कार है। योगेश्वर! आपको नमस्कार है।

विश्व की उत्पति के कारण! आप को नमस्कार है।

इस प्रकार भगवान् शिव की स्तुति करके मैंने उन्हें भक्तिभाव से पाद्य और अर्घ्य निवेदन किया। फिर दोनों हाथ जोड़कर उन्हें अपना सब कुछ समर्पित कर दिया। तात! तदनन्तर मेरे मस्तक पर शीतल जल और दिव्य सुगन्ध से युक्त फूलों की शुभ वृष्टि होने लगी। उसी समय देव-किंकरों ने दिव्य दुन्दुभि बजाना आरम्भ किया और पवित्र गन्ध से युक्त पुण्यमयी सुखद वायु चलने लगी। तब पत्नी सहित प्रसन्न हुए वृषभध्वज महादेवजी ने मेरा हर्ष बढ़ाते हुए-से वहीं सम्पूर्ण देवताओं से कहा-देवताओ! तुम सब लोग देखो कि महात्मा उपमन्यु की मुझमें नित्य एक भाव से बनी रहनेवाली कैसी उत्तम भक्ति है। श्रीकृष्ण! शूलपाणि महादेवजी के ऐसा कहने पर वे सब देवता हाथ जोड़ उन वृषभध्वज शिवजी को नमस्कार करके बोले-भगवन्! देवदेवश्वर! लोकनाथ! ये द्विजश्रेष्ठ उपमन्यु आपसे अपनी सम्पूर्ण कामनाओं के अनुसार अभीष्ट फल प्राप्त करें। ब्रह्मा आदि सम्पूर्ण देवताओं के ऐसा कहनेपर सबके ईश्वर और कल्याणकारी भगवान् शिव ने मुझसे हँसते हुए-से कहा।

भगवान् शिवजी बोले-'बस उपमन्यो! मैं तुमपर बहुत संतुष्ट हूँ। मुनिपुङ्गव! तुम मेरी ओर देखो। ब्रह्मर्षे! मुझमें तुम्हारी सुदृढ़ भक्ति है। मैंने तुम्हारी परीक्षा कर ली है। तुम्हारी इस भक्ति से मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई है, अतः मैं तुम्हें आज तुम्हारी सभी मनोवाञ्छित कामनायें पूर्ण किये देता हूँ।'

परम बुद्धिमान् महादेवजी के इस प्रकार कहने पर मेरे नेत्रों से हर्ष के आँसू बहने लगे और सारे शरीर में रोमांच हो आया। तब मैंने धरतीपर घुटने टेककर भगवान् को बारंबार प्रणाम किया और हर्षगद्गद वाणीद्वारा महादेवजी से इस प्रकार कहा-देव! आज ही मैंने वास्तव में जन्म ग्रहण किया है। आज मेरा जन्म सफल हो गया; क्योंकि इस समय मेरे सामने देवताओं और असुरों के गुरु आप साक्षात् महादेवजी खड़े हैं। जिन अमित पराक्रमी महादेवजी को देवता भी सुगमता-पूर्वक देख नहीं पाते हैं उन्हीं का मुझे प्रत्यक्ष दर्शन मिला है; अतः मुझसे बढ़कर धन्यवाद का भागी दूसरा कौन हो सकता है? अजन्मा, अविनाशी, ज्ञानमय तथा सर्वश्रेष्ठरूप से विख्यात जो सनातन परम तत्त्व है, उसका ज्ञानी पुरुष इसी रूप में ध्यान करते हैं(जैसा कि आज मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ)।

स एष भगवान् देवः सर्वसत्त्वादिरव्ययः।
सर्वतत्त्वविधानज्ञः प्रधानपुरुषः परः ।।
योऽसृजद् दक्षिणादङ्गाद् ब्रह्माणं लोकसम्भवम्।
वामपार्श्वात् तथा विष्णुं लोकरक्षार्थमीश्वरः।।
युगान्ते चैव सम्प्राप्ते रुद्रमीशोऽसृजत् प्रभुः।
स रुद्रः संहरन् कृत्स्नं जगत् स्थावरजङ्गमम्।।
कालो भूत्वा महातेजाः संवर्तक इवानलः।
युगान्ते सर्वभूतानि ग्रसन्निव व्यवस्थितः।। (346-349)

जो सम्पूर्ण प्राणियों का आदिकारण, अविनाशी, समस्त तत्त्वों के विधान का ज्ञाता तथा प्रधान परम पुरुष है, वह ये भगवान् महादेवजी ही हैं। इन्हीं जगदीश्वर ने अपने दाहिने अंग से लोकस्रष्टा ब्रह्मा को और बायें अंग से जगत् की रक्षा के लिये विष्णु को उत्पन्न किया है। प्रलयकाल प्राप्त होनेपर इन्हीं भगवान् शिव ने रुद्र की रचना की थी। वे ही रुद्र सम्पूर्ण चराचर जगत् का संहार करते हैं। वे ही महातेजस्वी काल होकर कल्प के अन्त में समस्त प्राणियों को अपना ग्रास बनाते हुये-से प्रलयकालीन अग्नि के सदृश स्थित होते हैं।

ये ही देवदेव महादेव चराचर जगत् की सृष्टि करके कल्पान्त में सबकी स्मृति-शक्ति को मिटाकर स्वयं ही स्थित रहते हैं। ये सर्वत्र गमन करनेवाले, सम्पूर्ण प्राणियों के आत्मा तथा समस्त भूतों के जन्म और वृद्धि के हेतु हैं। ये सर्वव्यापी परमेश्वर सदा सम्पूर्ण देवताओं से अदृश्य रहते हैं। प्रभो! यदि आप मुझपर संतुष्ट हैं और मुझे वर देना चाहते हैं तो हे देव! हे सुरेश्वर! मेरी सदा आप में भक्ति बनी रहे। सुरश्रेष्ठ! विभो! आपकी कृपा से मैं भूत, वर्तमान और भविष्य को जान सकूँ; ऐसा मेरा निश्चय है। मैं अपने बन्धु-बान्धवों सहित सदा अक्षय दूध-भात का भोजन प्राप्त करूँ और हमारे इस आश्रम में सदा आप का निकट निवास रहे। मेरे ऐसा कहनेपर लोकपूजित चराचरगुरु महातेजस्वी महेश्वर भगवान् शिव मुझसे यों बोले।

भगवान् शिव ने कहा-'ब्रह्मन्! तुम दुःख से रहित अजर-अमर हो जाओ। यशस्वी, तेजस्वी तथा दिव्य ज्ञान से सम्पन्न बने रहो। मेरी कृपा से तुम ऋषियों के भी दर्शनीय एवं आदरणीय होओगे तथा सदा शीलवान्, गुणवान्, सर्वज्ञ एवं प्रियदर्शन बने रहोगे। तुम्हें अक्षय यौवन और अग्नि के समान तेज प्राप्त हो। तुम्हारे लिये क्षीरसागर सुलभ हो जायगा। तुम जहाँ-जहाँ प्रिय वस्तु की इच्छा करोगे, वहाँ-वहाँ तुम्हारी सारी कामना सफल होगी और तुम्हें क्षीरसागर का सांनिध्य प्राप्त होगा। तुम अपने भाई-बन्धुओं के साथ एक कल्पतक अमृत-सहित दूध-भात का भोजन पाते रहो। तत्पश्चात् तुम मुझे प्राप्त हो जाओगे। तुम्हारे बन्धु-बान्धव, कुल तथा गोत्रकी परम्परा सदा अक्षय बनी रहेगी। द्विजश्रेष्ठ! मुझमें तुम्हारी सदा अचल भक्ति होगी तथा द्विजप्रवर! तुम्हारे इस आश्रम के निकट मैं सदा अदृश्यरूप से निवास करूँगा। बेटा! तुम इच्छानुसार यहाँ रहो। कभी किसी बात के लिये चिन्ता न करना। विप्रवर! तुम्हारे स्मरण करनेपर मैं पुनः तुम्हें दर्शन दूँगा।'

ऐसा कहकर वे करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी भगवान् शंकर उपर्युक्त वर प्रदान करके वहीं अन्तर्धान हो गये। श्रीकृष्ण! इस प्रकार मैंने समाधि के द्वारा देवाधिदेव भगवान् शंकर का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त किया। उन बुद्धिमान् महादेवजी ने जो कुछ कहा था वह सब मुझे प्राप्त हो गया है। श्रीकृष्ण! यह सब आप प्रत्यक्ष देख लें। यहाँ सिद्ध महर्षि, विद्याधर, यक्ष, गन्धर्व और अप्सराएँ विद्यमान हैं। देखिये, यहाँ के वृक्ष, लता और गुल्म सब प्रकार के फूल और फल देनेवाले हैं। ये सभी ऋतुओं के फूलों से युक्त, सुखदायक पल्लवों से सम्पन्न और सुगन्ध से परिपूर्ण हैं। महाबाहो! देवताओं के भी देवता

तथा सबके ईश्वर महात्मा शिव के प्रसाद से ही यहाँ सबकुछ दिव्य भाव से सम्पन्न दिखायी देता है।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–राजन् उनकी यह बात सुनकर मानो मुझे भगवान् शिव का प्रत्यक्ष दर्शन हो गया हो, ऐसा प्रतीत हुआ। फिर बड़े विस्मय में पड़कर मैंने उन महामुनि से पूछा। 'विप्रवर! आप धन्य हैं। आप से बढ़कर पुण्यात्मा दूसरा पुरुष कौन है? क्योंकि आपके इस आश्रम में साक्षात् देवाधिदेव निवास करते हैं। मुनि श्रेष्ठ! क्या कल्याणकारी भगवान् शिव मुझे भी इसी प्रकार दर्शन देंगे? मुझपर भी कृपा करेंगे?

(2) भगवान् कृष्ण की तपस्या

उपमन्यु बोले–निष्पाप कमलनयन! जैसे मैंने भगवान् का दर्शन किया है, उसी प्रकार आप भी थोड़े ही समय में महादेवजी का दर्शन प्राप्त करेंगे; इसमें संशय नहीं है। पुरुषोत्तम! मैं दिव्यदृष्टि से देख रहा हूँ। आप आजसे छठे महीने में अमित पराक्रमी महादेवजी का दर्शन करेंगे। यदुश्रेष्ठ! पत्नीसहित महादेवजी से आप सोलह और आठ वर प्राप्त करेंगे। यह मैं आप से सच्ची बात कहता हूँ। महाबाहो! बुद्धिमान् महादेवजी के कृपा–प्रसाद से मुझे सदा ही भूत, भविष्य और वर्त्तमान– तीनों काल का ज्ञान प्राप्त है। माधव! भगवान् हरने यहाँ रहनेवाले इन सहस्त्रों मुनियों को कृपापूर्ण हृदयसे अनुगृहीत किया है। फिर आपपर वह अपना कृपाप्रसाद क्यों नहीं प्रकट करेंगे। आप जैसे ब्रह्मणभक्त, कोमलस्वभाव और श्रद्धालु पुरुष का समागम देवताओं के लिये भी प्रशंसनीय है। मैं आप को जपनेयोग्य मन्त्र प्रदान करूँगा, जिससे आप भगवान् शंकर का दर्शन करेंगे।

श्रीकृष्ण कहते हैं–तब मैंने उनसे कहा–ब्रह्मन्! महामुने! मैं आपके कृपाप्रसाद से दैत्यदलोंका दलन करनेवाले देवेश्वर महादेवजी का दर्शन अवश्य करूँगा। भरतनन्दन! इस प्रकार महादेवजी की महिमा से सम्बन्ध रखनेवाली कथा कहते हुए उन मुनीश्वर के आठ दिन एक मुहूर्त के समान बीत गये। आठवें दिन विप्रवर उपमन्यु ने विधिपूर्वक मुझे दीक्षा दी। उन्होंने मेरा सिर मुड़ा दिया। मेरे शरीर में घी लगाया तथा मुझसे दण्ड, कुशा, चीर एवं मेखला धारण कराया। मैं एक महीनेतक फलाहार करके रहा और दूसरे महीने में केवल जलका आहार किया। तीसरे, चौथे और पाँचवे महीने में मैं दोनों बाँहें ऊपर उठाये एक पैर से खड़ा रहा। आलस्य को अपने पास नहीं आने दिया। उन दिनों वायुमात्र ही मेरा आहार रहा। भारत! पाण्डुनन्दन! छठे महीने में आकाश के भीतर मुझे सहस्त्रों सूर्यों का सा तेज दिखायी दिया। उस तेज के भीतर एक और तेजोमण्डल दृष्टिगोचर हुआ, जिसका सर्वाङ्ग इन्द्रधनुष से परिवेष्टित था। विद्युन्माला उसमें झरोखे के समान प्रतीत होती थी। वह तेज नील पर्वतमाला के समान प्रकाशित होता था। उस द्विविध तेज के कारण वहाँ का आकाश बकपंक्तियों से विभूषित–सा जान पड़ता था। उस नील तेज के भीतर महातेजस्वी भगवान् शिव तप, तेज, कान्ति तथा अपनी तेजस्विनी पत्नी उमादेवी के साथ विराजमान थे।

कुन्तीनन्दन! जो सम्पूर्ण देवसमुदाय की गति हैं तथा सबकी पीड़ा हर लेते हैं, उन भगवान् हरको

जब मैंने देखा, तब मेरे रोंगटे खड़े हो गये और मेरे नेत्र आश्चर्य से खिल उठे। भगवान् के मस्तक पर मुकुट था। उनके हाथ में गदा, त्रिशूल और दण्ड शोभा पाते थे। सिर पर जटा थी। उन्होंने व्याघ्रचर्म धारण कर रखा था। पिनाक और वज्र भी उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। उनकी दाढ़ तीखी थी। उन्होंने सुन्दर बाजूबंद पहनकर सर्पमय यज्ञोपवीत धारण कर रखा था। वे अपने वक्षःस्थल पर अनेक रंगवाली दिव्य माला धारण किये हुए थे, जो गुल्फदेश(घुटनों) तक लटक रही थी। जैसे शरद्ऋतु में संध्या की लाली से युक्त और घेरे से घिरे हुए चन्द्रमा का दर्शन होता हो, उसी प्रकार मैंने मालावेष्टित उन भगवान् महादेवजी का दर्शन किया था। प्रमथगणों द्वारा सब ओर से घिरे हुए महातेजस्वी महादेव परिधि से घिरे हुए शरत्काल के सूर्य की भाँति बड़ी कठिनाई से देखे जाते थे। इस प्रकार मन को वश में रखनेवाले और कर्मेन्द्रियों द्वारा शुभकर्म का ही अनुष्ठान करनेवाले महादेवजी की, जो ग्यारह सौ रुद्रों से घिरे हुए थे, मैंने स्तुति की। बारह आदित्य, आठ वसु, साध्यगण, विश्वेदेव तथा अश्विनीकुमार–ये भी सम्पूर्ण स्तुतियों द्वारा सबके देवता महादेवजी की स्तुति कर रहे थे। इन्द्र तथा वामनरूपधारी भगवान् विष्णु–ये दोनों अदितिकुमार और ब्रह्माजी भगवान् शिव के निकट रथन्तर साम का गान कर रहे थे। बहुत से योगीश्वर, पुत्रोंसहित ब्रह्मर्षि तथा देवर्षिगण भी योगसिद्धि प्रदान करनेवाले, पिता एवं गुरुरूप महादवजी की स्तुति करते थे। देवेश्वर शिव मेरे सामने खड़े थे। भारत! मेरे सामने महादेवजी को खड़ा देख प्रजापतियों से लेकर इन्द्रतक सारा जगत् मेरी ओर देखने लगा। किंतु उस समय महादेवजी को देखने की मुझमें शक्ति नहीं रह गयी थी। तब भगवान् शिवने मुझसे कहा–'श्रीकृष्ण! मुझे देखो, मुझसे वार्तालाप करो। तुमने पहले भी सैंकड़ों और हजारों बार मेरी आराधना की है। तीनों लोकों में तुम्हारे समान दूसरा कोई मुझे प्रिय नहीं है।'[1] जब मैंने मस्तक झुकाकर महादेवजी को प्रणाम किया, तब देवी उमा को बड़ी प्रसन्नता हुई। उस समय मैंने ब्रह्मा आदि देवताओं द्वारा प्रशंसित भगवान् शिव से इस प्रकार कहा।

नमोऽस्तु ते शाश्वत सर्वयोने ब्रह्माधिपं त्वामृषयो वदन्ति।
तपश्च सत्त्वं च रजस्तमश्च त्वामेव सत्यं च वदन्ति सन्तः।। (407)

श्रीकृष्ण कहते हैं–सबके कारण भूत सनातन परमेश्वर! आपको नमस्कार है। ऋषि आप को ब्रह्माजी का भी अधिपति बताते हैं। साधु पुरुष आपको ही तप, सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण तथा सत्यस्वरूप कहते हैं।

त्वं वै ब्रह्मा च रुद्रश्च वरुणोऽग्निर्मनुर्भवः।
धाता त्वष्टा विधाता च त्वं प्रभुः सर्वतोमुखः।।
त्वत्तो जातानि भूतानि स्थावराणि चराणि च।

---

1. **ततो मामब्रवीद् देवः पश्य कृष्ण वदस्व च।**
त्वया ह्याराधितश्चाहं शतशोऽथ सहस्रशः।।(405)
त्वत्समो नास्ति मे कश्चित् त्रिषु लोकेषु वै प्रियः।(406)

त्वया सृष्टमिदं कृत्स्नं त्रैलोक्यं सचराचरम्।।
यानीन्द्रियाणीह मनश्च कृत्स्नं ये वायवः सप्त तथैव चाग्नयः।
ये देवसंस्थास्तवदेवताश्च तस्मात् परं त्वामृषयो वदन्ति।। (408 - 410)

आप ही ब्रह्मा, रुद्र, वरुण, अग्नि, मनु, शिव, धाता, विधाता और त्वष्टा हैं। आप ही सब ओर मुखवाले परमेश्वर हैं। समस्त चराचर प्राणी आप ही से उत्पन्न हुए हैं। आपने ही स्थावर-जङ्गम प्राणियों सहित इस समस्त त्रिलोकी की सृष्टि की है। यहाँ जो-जो इन्द्रियाँ, जो सम्पूर्ण मन, जो समस्त वायु और सात अग्नियाँ[1] हैं, जो देवसमुदाय के अंदर रहनेवाले स्तवन के योग्य देवता हैं, उन सबसे परे आप की स्थिति है। ऋषिगण आपके विषय में ऐसा ही कहते हैं।

वेदाश्च यज्ञाः सोमश्च दक्षिणा पावको हविः।
यज्ञोपगं च यत् किंचिद् भगवांस्तदसंशयम्।।
इष्टं दत्तमधीतं च व्रतानि नियमाश्च ये।
ह्रीः कीर्तिः श्रीर्द्युतिस्तुष्टिः सिद्धिश्चैव तदर्पणी।।
कामः क्रोधो भयं लोभो मदः स्तम्भोऽथ मत्सरः।
आधयो व्याधयश्चैव भगवंस्तनवस्तव।।
कृतिर्विकारः प्रणयः प्रधानं बीजमव्ययम्।
मनसः परमा योनिः प्रभावश्चापि शाश्वतः।।
अव्यक्तः पावनोऽचिन्त्यः सहस्रांशुर्हिरण्मयः।
आदिर्गणानां सर्वेषां भवान् वै जीविताश्रयः।। (411 - 415)

वेद, यज्ञ, सोम, दक्षिणा, अग्नि, हविष्य तथा जो कुछ भी यज्ञोपयोगी सामग्री है, वह सब आप भगवान् ही हैं, इसमें संशय नहीं है। यज्ञ, दान, अध्ययन, व्रत और नियम, लज्जा, कीर्ति, श्री, द्युति, तुष्टि तथा सिद्धि-ये सब आपके स्वरूप की प्राप्ति करानेवाले हैं। भगवन्! काम, क्रोध, भय, लोभ, मद, स्तब्धता, मात्सर्य, आधि और व्याधि-ये सब आपके ही शरीर हैं। क्रिया, विकार, प्रणय, प्रधान, अविनाशी बीज, मन का परम कारण और सनातन प्रभाव-ये भी आपके ही स्वरूप हैं। अव्यक्त, पावन, अचिन्त्य, हिरण्मय सूर्यस्वरूप आप ही समस्त गणों के आदिकारण तथा जीवन के आश्रय हैं।

महानात्मा मतिर्ब्रह्मा विश्वः शम्भुः स्वयम्भुवः।
बुद्धिः प्रज्ञोपलब्धिश्च संवित् ख्यातिर्धृतिः स्मृतिः।।
पर्यायवाचकैः शब्दैर्महानात्मा विभाव्यते।

---

1. गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि, आहवनीय, सभ्य और आवसथ्य-ये पाँच वैदिक अग्नियाँ हैं। स्मार्त छठी और लौकिक सातवीं अग्नि है।

त्वां बुद्ध्वा ब्राह्मणो वेदात् प्रमोहं विनियच्छति।। (416 - 417)

महान्, आत्मा, मति, ब्रह्मा, विश्व, शम्भु, स्वयम्भू, बुद्धि, प्रज्ञा, उपलब्धि, संवित्, ख्याति, धृति और स्मृति - इन चौदह पर्यायवाची शब्दों द्वारा आप परमात्मा ही प्रकाशित होते हैं। वेद से आपका बोध प्राप्त करके ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण मोह का सर्वथा नाश कर देते हैं।

हृदयं सर्वभूतानां क्षेत्रज्ञस्त्वमृषिस्तुतः।
सर्वतःपाणिपादस्त्वं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।।
सर्वतःश्रुतिमाँल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठसि।
फलं त्वमसि तिग्मांशोर्निमेषादिषु कर्मसु।।
त्वं वै प्रभार्चिः पुरुषः सर्वस्य हृदि संश्रितः।
अणिमा महिमा प्राप्तिरीशानो ज्योतिरव्ययः।।
त्वयि बुद्धिर्मतिर्लोकाः प्रपन्नाः संश्रिताश्च ये।
ध्यानिनो नित्ययोगाश्च सत्यसत्त्वा जितेन्द्रियाः।। (418 - 421)

ऋषियों द्वारा प्रशंसित आप ही सम्पूर्ण भूतों के हृदय में स्थित क्षेत्रज्ञ हैं। आपके सब ओर हाथ - पैर हैं। सब ओर नेत्र, मस्तक और मुख हैं। आपके सब ओर कान हैं और जगत् में आप सबको व्याप्त करके स्थित हैं। जीव के आँख मीचने और खोलने से लेकर जितने कर्म हैं, उनके फल आप ही हैं। आप अविनाशी परमेश्वर ही सूर्य की प्रभा और अग्नि की ज्वाला हैं। आप ही सबके हृदय में आत्मारूप से निवास करते हैं। अणिमा, महिमा और प्राप्ति आदि सिद्धियाँ तथा ज्योति भी आप ही हैं। आपमें बोध और मनन की शक्ति विद्यमान है। जो लोग आपकी शरण में आकर सर्वथा आपके आश्रित रहते हैं, वे ध्यानपरायण, नित्य योगयुक्त, सत्यसंकल्प तथा जितेन्द्रिय होते हैं।

यस्त्वां ध्रुवं वेदयते गुहाशयं प्रभुं पुराणं पुरुषं च विग्रहम्।
हिरण्मयं बुद्धिमतां परां गतिं स बुद्धिमान् बुद्धिमतीत्य तिष्ठति।।
विदित्वा सप्त सूक्ष्माणि षडङ्गं त्वां च मूर्तितः।
प्रधानविधियोगस्थस्त्वामेव विशते बुधः।। (422 - 423)

जो आपको अपनी हृदयगुहा में स्थित आत्मा, प्रभु, पुराण - पुरुष, मूर्तिमान् परब्रह्म, हिरण्मय पुरुष और बुद्धिमानों की परम गतिरूप में निश्चित भाव से जानता है, वही बुद्धिमान् लौकिक बुद्धि का उल्लङ्घन करके परमात्मभाव में प्रतिष्ठित होता है। विद्वान् पुरुष महत्तत्त्व, अहंकार और पञ्चतन्मात्रा - इन सात सूक्ष्म तत्त्वों को जानकर आपके स्वरूपभूत छः अंगों[1] का बोध प्राप्त करके प्रमुख विधियोग का आश्रय ले आप में ही प्रवेश करते हैं।

कुन्तीनन्दन! जब मैंने सबकी पीड़ा का नाश करनेवाले महादेवजी की इस प्रकार स्तुति की, तब

1. सर्वज्ञता, तृप्ति, अनादि बोध, स्वतन्त्रता, नित्य अलुप्त शक्ति तथा अनन्त शक्ति - ये महेश्वर के स्वरूपभूत छः अंग बताये गये हैं।

वह सम्पूर्ण चराचर जगत् सिंहनाद कर उठा। ब्राह्मणों के समुदाय, देवता, असुर, नाग, पिशाच, पितर, पक्षी, राक्षसगण, समस्त भूतगण तथा महर्षि भी उस समय भगवान् शिव को प्रणाम करने लगे। मेरे मस्तक पर ढेर-के-ढेर दिव्य सुगन्धित पुष्पों की वर्षा होने लगी तथा अत्यन्त सुखदायक हवा चलने लगी। जगत् के हितैषी भगवान् शंकर ने उमा देवी की ओर देखकर मेरी ओर देखा और फिर इन्द्र पर दृष्टिपात करके मुझसे स्वयं कहा-शत्रुहन् श्रीकृष्ण! मुझमें जो तुम्हारी पराभक्ति है, उसे सब लोग जानते हैं। अब तुम अपना कल्याण करो; क्योंकि तुम्हारे ऊपर मेरा विशेष प्रेम है।[1]

(श्रीमहाभारत-अनुशासनपर्व-दानधर्मपर्व/अध्याय-14)

(3) श्रीकृष्ण को शिव-पार्वती से वर की प्राप्ति

श्रीकृष्ण कहते हैं-भारत! तदनन्तर मन को वश में करके तेजोराशि में स्थित महादेवजी को मस्तक झुकाकर प्रणाम करने के अनन्तर बड़े हर्ष में भरकर मैंने उन भगवान् शिव से कहा-धर्म में दृढ़तापूर्वक स्थिति, युद्ध में शत्रुओं का संहार करने की क्षमता, श्रेष्ठ यश, उत्तम बल, योगबल, सबका प्रिय होना, आपका सांनिध्य तथा दस हजार पुत्र-ये ही आठ वर मैं माँग रहा हूँ। मेरे इस प्रकार कहने पर भगवान् शंकर ने कहा, 'एवमस्तु-ऐसा ही हो।' तब सबका धारण-पोषण करनेवाली सर्वपावनी तपोनिधि रुद्रपत्नी जगदम्बा उमादेवी एकाग्रचित्त होकर बोलीं-'निष्पाप श्यामसुन्दर! भगवान् ने तुम्हें साम्ब नामक पुत्र दिया है। अब मुझसे भी अभीष्ट आठ वर माँग लो। मैं तुम्हें वे वर प्रदान करती हूँ।' पाण्डुनन्दन! तब मैंने जगदम्बा के चरणों में सिर से प्रणाम करके उनसे कहा-'ब्राह्मणों पर कभी मेरे मन में क्रोध न हो। मेरे पिता मुझपर प्रसन्न रहें। मुझे सैकड़ों पुत्र प्राप्त हों। उत्तम भोग सदा उपलब्ध रहें। हमारे कुल में प्रसन्नता बनी रहे। मेरी माता भी प्रसन्न रहें। मुझे शान्ति मिले और प्रत्येक कार्य में कुशलता प्राप्त हो-ये आठ वर और माँगता हूँ।'

भगवती उमा ने कहा-'अमरों के समान प्रभावशाली श्रीकृष्ण! ऐसा ही होगा। मैं कभी झूठ नहीं बोलती हूँ। तुम्हें सोलह हजार रानियाँ होगी। उनका तुम्हारे प्रति प्रेम रहेगा। तुम्हें अक्षय धनधान्य की प्राप्ति होगी। बन्धु-बान्धवों की ओर से तुम्हें प्रसन्नता प्राप्त होगी। मैं तुम्हारे इस शरीर के सदा कमनीय बने रहने का वर देती हूँ और तुम्हारे घर में प्रतिदिन सात हजार अतिथि भोजन करेंगे।'[2]

---

1. **विदुः कृष्ण परां भक्तिमस्मासु तव शत्रुहन्। क्रियतामात्मनः श्रेयः प्रीतिर्हि त्वयि मे परा।।** (428)

2. यहाँ श्रीकृष्ण के माँगे हुए आठ वरों को 'एवं भविष्यति' इस वाक्य के द्वारा देने के पश्चात् पार्वतीजी अपनी ओर से आठ वर और देती हैं। इनमें 'अमरप्रभाव' इस सम्बोधन के द्वारा देवोपम प्रभाव का दान ही पहला वरदान सूचित किया गया है। 'मैं कभी झूठ नहीं बोलती' इस कथन के द्वारा 'तुम भी कभी झूठ नहीं बोलोगे' यह दूसरा वर सूचित होता है। सोलह हजार रानियों के प्राप्त होने का वर तीसरा है। उनका प्रिय होना चौथा वर है। अक्षय धन-धान्य की प्राप्ति पाँचवा वर है। बान्धवों की प्रीति छठा, शरीर की कमनीयता सातवाँ और सात हजार अतिथियों का भोजन आठवाँ वर है। इससे पहले उपमन्यु द्वारा जो सोलह और आठ वर के प्राप्त होने की बात कही गयी थी, उसकी सङ्गति लग जाती है।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं– भरतनन्दन! भीमसेन के बड़े भैया! इस प्रकार महादेवजी तथा देवी पार्वती मुझे वरदान देकर अपने गणों के साथ उसी क्षण अन्तर्धान हो गये। नृपश्रेष्ठ! यह अत्यन्त अद्‌भुत वृत्तान्त मैंने पहले महातेजस्वी ब्राह्मण उपमन्यु को पूर्णरूप से बताया था। उत्तम व्रत का पालन करनेवाले नरेश! उपमन्युने देवाधिदेव महादेवजी को नमस्कार करके इस प्रकार कहा–

नास्ति शर्वसमो देवो नास्ति शर्वसमा गतिः।
नास्ति शर्वसमो दाने नास्ति शर्वसमो रणे।। (11)

उपमन्यु बोले – महादेवजी के समान कोई देवता नहीं है। महादेवजी के समान कोई गति नहीं है। दान में शिवजी की समानता करनेवाला कोई नहीं है तथा युद्ध में भी भगवान् शंकर के समान दूसरा कोई वीर नहीं है।(श्रीमहाभारत, अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व अ0 – 15)

(4) ब्रह्मपुत्र तण्डि की शिवभक्ति

उपमन्यु(श्रीकृष्ण से) कहते हैं– तात! सत्ययुग में तण्डि नाम से विख्यात एक ऋषि थे, जिन्होंने भक्तिभाव से ध्यान के द्वारा दस हजार वर्षोंतक महादेवजी की आराधना की थी। उन्हें जो फल प्राप्त हुआ था, उसे बता रहा हूँ, सुनिये। उन्होंने महादेवजी का दर्शन किया और स्तोत्रों द्वारा उन प्रभु की स्तुति की। इस तरह तण्डि ने तपस्या में संलग्न होकर अविनाशी परमात्मा महामना शिव का चिन्तन करके अत्यन्त विस्मित हो इस प्रकार कहा था– 'सांख्यशास्त्र के विद्वान् पर, प्रधान, पुरुष, अधिष्ठाता और ईश्वर कहकर सदा जिनका गुणगान करते हैं, योगीजन जिनके चिन्तन में लगे रहते हैं, विद्वान् पुरुष जिन्हें जगत् की उत्पत्ति और विनाश का कारण समझते हैं, देवताओं, असुरों और मुनियों में भी जिनसे श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है, उन अजन्मा, अनादि, अनन्त, अनघ और अत्यन्त सुखी, प्रभावशाली ईश्वर महादेवजी की मैं शरण लेता हूँ।' इतना कहते ही तण्डि ने उन तपोनिधि, अविकारी, अनुपम, अचिन्त्य, शाश्वत, ध्रुव, निष्कल, सकल, निर्गुण एवं सगुण ब्रह्मका दर्शन प्राप्त किया, जो योगियों के परमानन्द, अविनाशी एवं मोक्षस्वरूप हैं। वे ही मनु, इन्द्र, अग्नि, मरुद्‌गण, सम्पूर्ण विश्व तथा ब्रह्माजी की भी गति हैं। मन और इन्द्रियों के द्वारा उनका ग्रहण नहीं हो सकता। वे अग्राह्य, अचल, शुद्ध बुद्धि के द्वारा अनुभव करने योग्य तथा मनोमय हैं। उनका ज्ञान होना अत्यन्त कठिन है। वे अप्रमेय हैं। जिन्होंने अपने अन्तःकरण को पवित्र एवं वशीभूत नहीं किया है, उनके लिये वे सर्वथा दुर्लभ हैं। वे ही सम्पूर्ण जगत् के कारण हैं। अज्ञानमय अन्धकार से अत्यन्त परे हैं। जो देवता अपने को प्राणवान्– जीवस्वरूप बनाकर उसमें मनोमय ज्योति बनकर स्थित हुए थे, उन्हीं के दर्शन की अभिलाषा से तण्डि मुनि बहुत वर्षों तक उग्र तपस्या में लगे रहे। जब उनका दर्शन प्राप्त कर लिया, तब उन मुनीश्वर ने जगदीश्वर शिव की इस प्रकार स्तुत की।

तण्डि ने कहा– 'सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर! आप पवित्रों में भी परम पवित्र तथा गतिशील प्राणियों की उत्तम गति हैं। तेजों में अत्यन्त उग्र तेज और तपस्याओं में उत्कृष्ट तप हैं। गन्धर्वराज विश्वावसु,

दैत्यराज हिरण्याक्ष और देवराज इन्द्र भी आपकी वन्दना करते हैं। सबको महान् कल्याण प्रदान करनेवाले प्रभो! आप परम सत्य हैं। आपको नमस्कार है। विभो! जो जन्म-मरण से भयभीत हो संसारबन्धन से मुक्त होने के लिये प्रयत्न करते हैं, उन यतियों को निर्वाण(मोक्ष) प्रदान करनेवाले आप ही है। आप ही सहस्त्रों किरणोंवाले सूर्य होकर तप रहे हैं। सुख के आश्रयरूप महेश्वर! आपको नमस्कार है।'

'ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, विश्वेदेव तथा महर्षि भी आपको यथार्थरूप से नहीं जानते हैं। फिर हम कैसे जान सकते हैं। आपसे ही सबकी उत्पत्ति होती है तथा आप में ही यह सारा जगत् प्रतिष्ठित है। काल, पुरुष और ब्रह्म-इन तीन नामों द्वारा आप ही प्रतिपादित होते हैं। पुराणवेत्ता देवर्षियों ने आप के ये तीन रूप बताये हैं। अधिपौरुष, अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैवत, अधिलोक, अधिविज्ञान और अधियज्ञ आप ही हैं। आप देवताओं के लिये भी दुर्ज्ञेय हैं। विद्वान् पुरुष आपको अपने ही शरीर में स्थित अन्तर्यामी आत्मा के रूप में जानकर संसार-बन्धन से मुक्त हो रोग-शोक से रहित परमभाव को प्राप्त होते हैं।'

त्वां विदित्वात्मदेहस्थं दुर्विदं दैवतैरपि।
विद्वांसो यान्ति निर्मुक्ताः परं भावमनामयम्।। (19)

'प्रभो! यदि आप स्वयं ही कृपा करके जीव का उद्धार करना न चाहें तो उसके बारंबार जन्म और मृत्यु होते रहते हैं। आप ही स्वर्ग और मोक्ष के द्वार हैं। आप ही उनकी प्राप्ति में बाधा डालनेवाले हैं तथा आप ही ये दोनों वस्तुएँ प्रदान करते हैं। आप ही स्वर्ग और मोक्ष हैं। आप ही काम और क्रोध हैं तथा आप ही सत्त्व, रज, तम, अधोलोक और ऊर्ध्वलोक हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, इन्द्र, सूर्य, यम, वरुण, चन्द्रमा, मनु, धाता, विधाता, और धनाध्यक्ष कुबेर भी आप ही हैं। पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, वाणी, बुद्धि, स्थिति, मति, कर्म, सत्य, असत्य तथा अस्ति और नास्ति भी आप ही हैं। आप ही इन्द्रियाँ और इन्द्रियों के विषय हैं। आप ही प्रकृति से परे निश्चल एवं अविनाशी तत्त्व हैं। आप ही विश्व और अविश्व-दोनों से परे विलक्षण भाव हैं तथा आप ही चिन्त्य और अचिन्त्य हैं। जो यह परम ब्रह्म है, जो वह परमपद है तथा जो सांख्यवेत्ताओं और योगियों की गति है, वह आप ही हैं-इसमें संशय नहीं है। ज्ञान से निर्मल बुद्धिवाले ज्ञानी पुरुष यहाँ जिस गति को प्राप्त करना चाहते हैं, सत्पुरुषों की उसी गति को निश्चित रूप से हम प्राप्त हो गये हैं; अतः आज हम निश्चय ही कृतार्थ हो गये। अहो, हम अज्ञानवश इतने दीर्घकालतक मोह में पड़े रहे हैं, क्योंकि जिन्हें विद्वान् पुरुष जानते हैं, उन्हीं सनातन परमदेव को हम अबतक नहीं जान सके थे।'

'अब अनेक जन्मों के प्रयत्न से मैंने यह साक्षात् आपकी भक्ति प्राप्त की है। आप ही भक्तों पर अनुग्रह करनेवाले महान् देवता हैं, जिन्हें जानकर ज्ञानी पुरुष मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। जो सनातन ब्रह्म देवताओं, असुरों और मुनियों के लिये भी गुह्य है, जो हृदयगुहा में स्थित रहकर मननशील मुनि के लिये भी दुर्विज्ञेय बने हुए हैं, वही ये भगवान् हैं। ये ही सबकी सृष्टि करनेवाले देवता हैं। इनके

सब ओर मुख हैं। ये सर्वात्मा, सर्वदर्शी, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ हैं। आप शरीर के निर्माता और शरीरधारी हैं, इसलिये देही कहलाते हैं। देह के भोक्ता और देहधारियों की परमगति हैं। आप ही प्राणों के उत्पादक, प्राणधारी, प्राणी, प्राणदाता तथा प्राणियों की गति हैं। ध्यान करनेवाले प्रियभक्तों की जो अध्यात्मगति है तथा पुनर्जन्म की इच्छा न रखनेवाले आत्मज्ञानी पुरुषों की जो गति बतायी गयी है, वह ये ईश्वर ही हैं। ये ही समस्त प्राणियों को शुभ और अशुभ गति प्रदान करनेवाले हैं। ये ही समस्त प्राणियों को जन्म और मृत्यु प्रदान करते हैं। संसिद्धि (मुक्ति) की इच्छा रखनेवाले पुरुषों की जो परम गति है, वह ये ईश्वर ही हैं। देवताओं सहित भू आदि समस्त लोकों को उत्पन्न करके ये महादेव ही (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र, यजमान-इन) अपनी आठ मूर्तियों द्वारा उनका धारण और पोषण करते हैं। इन्हीं से सबकी उत्पत्ति होती है और इन्हीं में सारा जगत् प्रतिष्ठित है और इन्हीं में सबका लय होता है।'

'ये ही एक सनातन पुरुष हैं। ये ही सत्य की इच्छा रखनेवाले सत्पुरुषों के लिये सर्वोत्तम सत्यलोक हैं। ये ही मुक्त पुरुषों के अपवर्ग (मोक्ष) और आत्मज्ञानियों के कैवल्य हैं। देवता, असुर और मनुष्यों को इनका पता न लगने पाये, मानो इसीलिये ब्रह्मा आदि सिद्ध पुरुषों ने इन परमेश्वर को अपनी हृदयगुफा में छिपा रखा है। हृदयमन्दिर में गूढ़भाव से रहकर प्रकाशित न होनेवाले इन परमात्मदेव ने सबको अपनी माया से मोहित कर रखा है। इसीलिये देवता, असुर और मनुष्य आप महादेव को यथार्थरूप से नहीं जान पाते हैं। जो लोग भक्तियोग से भावित होकर उन परमेश्वर की शरण लेते हैं, उन्हीं को यह हृदय-मन्दिर में शयन करनेवाले भगवान् स्वयं अपना दर्शन देते हैं। जिन्हें जान लेने पर फिर जन्म और मरण का बन्धन नहीं रह जाता है तथा जिनका ज्ञान प्राप्त हो जाने पर फिर दूसरे किसी उत्कृष्ट ज्ञेय तत्त्व का जानना शेष नहीं रहता हैं, जिन्हें प्राप्त कर लेने पर विद्वान् पुरुष बड़े-से-बड़े लाभ को भी उनसे अधिक नहीं मानता है, जिस सूक्ष्म परम पदार्थ को पाकर ज्ञानी मनुष्य ह्रास और नाश से रहित परमपद को प्राप्त कर लेता है, सत्त्व आदि तीन गुणों तथा चौबीस तत्त्वों को जाननेवाले सांख्यज्ञान विशारद् सांख्ययोगी विद्वान् जिस सूक्ष्म तत्त्व को जानकर उस सूक्ष्मज्ञानरूपी नौका के द्वारा संसार समुद्र से पार होते और सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं, प्राणायामपरायण पुरुष वेदवेत्ताओं के जानने योग्य तथा वेदान्त में प्रतिष्ठित जिस नित्य तत्त्व का ध्यान और जप करते हैं और उसी में प्रवेश कर जाते है; वही ये महेश्वर हैं। ॐकाररूपी रथपर आरूढ़ होकर वे सिद्ध पुरुष इन्हीं में प्रवेश करते हैं। ये ही देवयान के द्वाररूप सूर्य कहलाते हैं। ये ही पितृयान-मार्ग के द्वार चन्द्रमा कहलाते हैं। काष्ठा, दिशा, संवत्सर और युग आदि भी ये ही हैं। दिव्य लाभ (देवलोक का सुख), अदिव्य लाभ (इस लोक का सुख), परम लाभ (मोक्ष), उत्तरायण और दक्षिणायन भी ये ही हैं।'

'पूर्वकाल में प्रजापति ने नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा इन्हीं नीललोहित नामवाले भगवान् की आराधना करके प्रजा की सृष्टि के लिये वर प्राप्त किया था। ऋग्वेद के विद्वान् तात्त्विक

यज्ञकर्म में ऋग्वेद के मन्त्रों द्वारा जिनकी महिमा का गान करते हैं, यजुर्वेद के ज्ञाता द्विज यज्ञ में यजुर्मन्त्रों द्वारा दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आहवनीय – इन त्रिविध रूपों से जाननेयोग्य जिन महादेवजी के उद्देश्य से आहुति देते हैं तथा शुद्ध बुद्धि से युक्त सामवेद के गानेवाले विद्वान् साममन्त्रों द्वारा जिनकी स्तुति गाते हैं, अथर्ववेदी ब्राह्मण ऋत, सत्य एवं परब्रह्म नाम से जिनकी स्तुति करते हैं, जो यज्ञ के परम कारण हैं, वे ही ये परमेश्वर समस्त यज्ञों के परमपति माने गये हैं।'

'मृत्यु, यम, अग्नि, संहार के लिये वेगशाली काल, काल के परम कारण तथा सनातन काल भी – ये महादेव ही हैं। चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह, वायु, ध्रुव, सप्तर्षि; सात भुवन, मूल प्रकृति, महत्तत्त्व, विकारों के सहित विशेषपर्यन्त समस्त तत्त्व, ब्रह्माजी से लेकर कीटपर्यन्त सम्पूर्ण जगत्, भूतादि, सत् और असत् आठ प्रकृतियाँ तथा प्रकृति से परे जो पुरुष है, इन सबके रूप में ये महादेवजी ही विराजमान हैं। इन महादेवजी का अंशभूत जो सम्पूर्ण जगत् चक्र की भाँति निरन्तर चलता रहता है, वह भी ये ही हैं। ये परमानन्दस्वरूप हैं। जो शाश्वत ब्रह्म है, वह भी ये ही हैं। ये ही विरक्तों की गति हैं और ये ही सत्पुरुषों के परमभाव हैं। ये ही उद्वेगरहित परमपद हैं। ये ही सनातन ब्रह्म हैं। शास्त्रों और वेदाङ्गों के ज्ञाता पुरुषों के लिये ये ही ध्यान करने के योग्य परमपद हैं। यही वह पराकाष्ठा, यही वह परम कला, यही वह परम सिद्धि और यही वह परम गति हैं एवं यही वह परम शान्ति और वह परम आनन्द भी हैं, जिसको पाकर योगीजन अपने को कृतकृत्य मानते हैं। यह तुष्टि, यह सिद्धि, यह श्रुति, यह स्मृति, भक्तों की यह अध्यात्मगति तथा ज्ञानी पुरुषों की यह अक्षय प्राप्ति (पुनरावृत्तिरहित मोक्षलाभ) आप ही हैं। प्रचुर दक्षिणावाले यज्ञों द्वारा सकाम भाव से यजन करनेवाले यजमानों की जो गति होती है, वह गति आप ही हैं। इसमें संशय नहीं है। देव! उत्तम योग – जप तथा शरीर को सुखा देनेवाले नियमोंद्वारा जो शान्ति मिलती है और तपस्या करनेवाले पुरुषों को जो दिव्य गति प्राप्त होती है, वह परम गति आप ही हैं। सनातन देव! कर्म – संन्यासियों को और विरक्तों को ब्रह्मलोक में जो उत्तम गति प्राप्त होती है, वह आप ही हैं। सनातन परमेश्वर! जो मोक्ष की इच्छा रखकर वैराग्य के मार्ग पर चलते हैं उन्हें, और जो प्रकृति में लय को प्राप्त होते हैं उन्हें, जो गति उपलब्ध होती है, वह आप ही हैं। देव! ज्ञान और विज्ञान से युक्त पुरुषों को जो सारूप्य आदि नाम से रहित, निरञ्जन एवं कैवल्यरूप परमगति प्राप्त होती है, वह आप ही हैं। प्रभो! वेद – शास्त्र और पुराणों में जो ये पाँच गतियाँ बतायी गयी हैं, ये आपकी कृपा से प्राप्त होती हैं, अन्यथा नहीं।'

इस प्रकार तपस्या की निधिरूप तण्डिने अपने मनसे महादेवजी की स्तुति की और पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने जिस परम ब्रह्मस्वरूप स्तोत्र का गान किया था, उसी का स्वयं भी गान किया।

उपमन्यु कहते हैं – तण्डि ने स्तुति करते हुए यह बात कही थी कि 'ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, विश्वेदेव और महर्षि भी आप को यथार्थरूप से नहीं जानते हैं', इससे भगवान् शंकर बहुत संतुष्ट हुए और बोले।

भगवान् श्रीशिव ने कहा – ब्रह्मन्! तुम अक्षय, अविकारी, दुःखरहित, यशस्वी, तेजस्वी एवं

दिव्यज्ञान से सम्पन्न होओगे। द्विजश्रेष्ठ! मेरी कृपा से तुम्हें एक विद्वान् पुत्र प्राप्त होगा, जिसके पास ऋषिलोग भी शिक्षा ग्रहण करने के लिये जायँगे। वह कल्पसूत्र का निर्माण करेगा, इसमें संशय नहीं है। वत्स! बोलो, तुम क्या चाहते हो? अब मैं तुम्हें कौन सा मनोवाञ्छित वर प्रदान करूँ।

तब तण्डि ने हाथ जोड़कर कहा–'प्रभो! आपके चरणारविन्द में मेरी सुदृढ़ भक्ति हो।'

उपमन्यु ने कहा–देवर्षियों द्वारा वन्दित और देवताओं द्वारा प्रशंसित होते हुए महादेवजी इन वरों को देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। यादवेश्वर! जब पार्षदोंसहित भगवान् अन्तर्धान हो गये, तब ऋषि ने मेरे आश्रमपर आकर यहाँ मुझसे ये सब बातें बतायीं। मानवश्रेष्ठ! तण्डिमुनि ने जिन आदिकाल के प्रसिद्ध नामों का मेरे सामने वर्णन किया, उन्हें आप भी सुनिये। वे सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं। पितामह ब्रह्मा ने पूर्वकाल में देवताओं के निकट महादेवजी के दस हजार नाम बताये थे और शास्त्रों में भी उनके सहस्र नाम वर्णित हैं। अच्युत! पहले देवेश्वर ब्रह्माजी ने महादेवजी की कृपा से महात्मा तण्डि के निकट जिन नामों का वर्णन किया था, महर्षि तण्डि ने भगवान् महादेव के उन्हीं समस्त गोपनीय नामों का मेरे समक्ष प्रतिपादन किया था।

(श्रीमहाभारत, अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व अ.–16)

(5) शिवसहस्रनामस्तोत्र और उसके पाठ का फल

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–तात युधिष्ठिर! तदनन्तर ब्रह्मर्षि उपमन्यु ने मन और इन्द्रियों को एकाग्र करके पवित्र हो हाथ जोड़ मेरे समक्ष वह नाम–संग्रह आदि से ही कहना आरम्भ किया।

उपमन्यु बोले–मैं ब्रह्माजी के कहे हुए, ऋषियों के बताये हुए तथा वेद–वेदाङ्गों से प्रकट हुए नामों द्वारा सर्वलोक विख्यात एवं स्तुति के योग्य भगवान् की स्तुति करूँगा। इन सब नामों का आविष्कार महापुरुषों ने किया है तथा वेदों में दत्तचित्त रहनेवाले महर्षि तण्डि ने भक्तिपूर्वक इनका संग्रह किया है। इसलिये ये सभी नाम सत्य, सिद्ध तथा सम्पूर्ण मनोरथों के साधक हैं। विख्यात श्रेष्ठ पुरुषों तथा तत्त्वदर्शी मुनियों ने इन सभी नामों का यथावत्‌रूप से प्रतिपादन किया है। महर्षि तण्डि ने ब्रह्मलोक से मृत्युलोक में इन नामों को उतारा है; इसलिये ये सत्यनाम सम्पूर्ण जगत् में आदरपूर्वक सुने गये हैं। यदुकुलतिलक श्रीकृष्ण! यह ब्रह्माजी का कहा हुआ सनातन शिव–स्तोत्र अन्य स्तोत्रों की अपेक्षा श्रेष्ठ है और उत्तम वेदमय है। सब स्तोत्रों में इसका प्रथम स्थान है। यह स्वर्ग की प्राप्ति करानेवाला, सम्पूर्ण भूतों के लिये हितकर एवं शुभकारक है। इसका मैं आपसे वर्णन करूँगा। आप परमेश्वर महादेवजी के भक्त हैं; अतः इस शिवस्वरूप स्तोत्र का वरण करें। शिवभक्त होने के ही कारण मैं यह सनातन वेदस्वरूप स्तोत्र आपको सुनाता हूँ। महादेवजी के इस सम्पूर्ण नामसमूह का पूर्णरूप से विस्तारपूर्वक वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता। माधव! जिनके आदि, मध्य और अन्त का पता देवता भी नहीं पाते हैं, उनके गुणों का पूर्णरूप से वर्णन कौन कर सकता है। परंतु मैं अपनी शक्ति के अनुसार उन बुद्धिमान् महादेवजी की ही कृपा से संक्षिप्त अर्थ, पद और अक्षरों से युक्त उनके चरित्र एवं स्तोत्र का वर्णन करूँगा।

उनकी आज्ञा प्राप्त किये बिना उन महेश्वर की स्तुति नहीं की जा सकती है। जब उनकी आज्ञा प्राप्त हुई है, तभी मैंने उनकी स्तुति की है। आदि-अन्त से रहित तथा जगत् के कारणभूत अव्यक्त योनि महात्मा शिव के नामों का कुछ संक्षिप्त संग्रह मैं बता रहा हूँ। श्रीकृष्ण! जो वरदायक, वरेण्य (सर्वश्रेष्ठ), विश्वरूप और बुद्धिमान् हैं, उन भगवान् शिव का पद्मयोनि ब्रह्माजी के द्वारा वर्णित नाम-संग्रह श्रवण करो। प्रपितामह ब्रह्माजी ने जो दस हजार नाम बताये थे, उन्हीं को मनरूपी मथनी से मथकर मथे हुए दही से घी की भाँति यह सहस्त्रनामस्तोत्र निकाला गया है। जैसे पर्वत का सार सुवर्ण और फूल का सार मधु है, उसी प्रकार यह दस हजार नामों का सार उद्धृत किया गया है। यह सहस्त्रनाम सम्पूर्ण पापों का नाश करनेवाला और चारों वेदों के समन्वय से युक्त है। यह मङ्गलजनक, पुष्टिकारक, राक्षसों का विनाशक तथा परम पावन है। जो भक्त हो, श्रद्धालु और आस्तिक हो, उसी को इसका उपदेश देना चाहिये। अश्रद्धालु, नास्तिक और अजितात्मा पुरुष को इसका उपदेश नहीं देना चाहिये।

श्रीकृष्ण! जो जगत् के कारणरूप ईश्वर महादेव के प्रति दोषदृष्टि रखता है, वह पूर्वजों और अपनी संतान के सहित नरक में पड़ता है।[1] यह सहस्त्रनामस्तोत्र ध्यान है, यह योग है, यह सर्वोत्तम ध्येय है, यह जपनीय मन्त्र है, यह ज्ञान है और यह उत्तम रहस्य है। जिसको अन्तकाल में भी जान लेनेपर मनुष्य परमगति को पा लेता है। यह सहस्त्रनामस्तोत्र परम पवित्र, मङ्गलकारक, बुद्धिवर्द्धक, कल्याणमय तथा उत्तम है। सम्पूर्ण लोकों के पितामह ब्रह्माजी ने पूर्वकाल में इस स्तोत्र का अविष्कार करके इसे समस्त दिव्यस्तोत्रों के राजा के पदपर प्रतिष्ठित किया था। तबसे महात्मा ईश्वर महादेव का यह देवपूजित स्तोत्र संसार में 'स्तवराज' के नाम से विख्यात हुआ। ब्रह्मलोक से यह स्तवराज स्वर्गलोक में उतारा गया। पहले इसे तण्डिमुनि ने प्राप्त किया था, इसलिये यह 'तण्डिकृत सहस्त्रनामस्तवराज' के रूप में प्रसद्धि हुआ। तण्डि ने स्वर्ग से उसे इस भूतलपर उतारा था। यह सम्पूर्ण मङ्गलों का भी मङ्गल तथा समस्त पापों का नाश करनेवाला है। जिनसे सम्पूर्ण लोक उत्पन्न होते और फिर उन्हीं में विलीन हो जाते हैं, जो सम्पूर्ण भूतों के आत्मा हैं, उन्हीं अमित तेजस्वी भगवान् शिव के एक हजार आठ नामों का वर्णन मुझसे सुनिये। पुरुषसिंह! इसका श्रवणमात्र करके आप अपनी सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लेंगे।[2]

इसके बाद उपमन्यु ने श्रीकृष्णजी को सहस्त्रनाम स्तोत्र सुनाया। स्तोत्र को सुनाकर उन्होंने श्रीकृष्ण से पुनः इस प्रकार कहा।

---

1. **यश्चाभ्यसूयते देवं कारणात्मानमीश्वरम्।**
   स कृष्ण नरकं याति सह पूर्वैः सहात्मनैः।। (18)

2. इन एक हजार आठ नामों का उल्लेख इसी पुस्तक के द्वितीय भाग में किया गया हैं। यहाँ केवल उनकी महिमा का वर्णन किया गया है।

श्रीकृष्ण! इस प्रकार बहुत – से नामों में से प्रधान – प्रधान नाम चुनकर मैंने उनके द्वारा भक्तिपूर्वक भगवान् शंकर का स्तवन किया। इस तरह भक्ति के द्वारा भगवान् को सामने रखते हुए मैंने उन्हीं से आज्ञा लेकर उन बुद्धिमानों में श्रेष्ठ भगवान् यज्ञपति की स्तुति की। जो सदा योगयुक्त एवं पवित्र भाव से रहनेवाला भक्त इन पुष्टिवर्धक नामों द्वारा भगवान् शिव की स्तुति करता है, वह स्वयं ही उन परमात्मा शिव को प्राप्त कर लेता है। यह उत्तम वेदतुल्य स्तोत्र परब्रह्म परमात्मस्वरूप शिव को अपना लक्ष्य बनाता है। ऋषि और देवता भी उसके द्वारा उन परमात्मा शिव की स्तुति करते हैं। जो लोग मन को संयम में रखकर इन नामों द्वारा भक्तवत्सल तथा आत्मनिष्ठा प्रदान करनेवाले भगवान् महादेव की स्तुति करते हैं, उनपर वे बहुत संतुष्ट होते हैं। इसी प्रकार मनुष्यों में जो प्रधानतः आस्तिक और श्रद्धालु हैं तथा अनेक जन्मतक की हुई स्तुति एवं भक्ति के प्रभाव से मन, वाणी, क्रिया तथा प्रेमभाव के द्वारा सोते – जागते चलते – बैठते और आँखों के खोलते – मीचते समय भी सदा अनन्यभाव से उन परम सनातनदेव जगदीश्वर शिव का बारंबार ध्यान करते हैं, वे अमित तेज से सम्पन्न हो जाते हैं तथा जो उन्हीं के विषय में सुनते – सुनाते एवं उन्हीं की महिमा का कथोपकथन करते हुए इस स्तोत्रद्वारा सदा उनकी स्तुति करते हैं, वे स्वयं भी स्तुत्य होकर सदा संतुष्ट होते हैं और रमण करते हैं।

कोटि सहस्त्र जन्मोंतक नाना प्रकार की संसारी योनियों में भटकते – भटकते जब कोई जीव सर्वथा पापों से रहित हो जाता है, तब उसकी भगवान् शिव में भक्ति होती है। भाग्य से जो सर्वसाधनसम्पन्न हो गया है, उसको जगत् के कारण भगवान् शिव में सम्पूर्णभाव से सर्वथा अनन्यभक्ति प्राप्त होती है। रुद्रदेव में निश्चल एवं निर्विघ्नरूप से अनन्यभक्ति हो जाय – यह देवताओं के लिये भी दुर्लभ है, मनुष्यों में तो प्रायः ऐसी भक्ति स्वतः नहीं उपलब्ध होती है। भगवान् शंकर की कृपा से ही मनुष्यों के हृदय में उनकी अनन्यभक्ति उत्पन्न होती है, जिससे वे अपने चित्त को उन्हीं के चिन्तन में लगाकर परमसिद्धि को प्राप्त होते हैं। जो सम्पूर्ण भाव से अनुगत होकर महेश्वर की शरण लेते हैं, शरणागतवत्सल महादेवजी इस संसार से उनका उद्धार कर देते हैं। इसी प्रकार भगवान् की स्तुति द्वारा अन्य देवगण भी अपने संसारबंधन का नाश करते हैं; क्योंकि महादेवजी की शरण लेने के सिवा ऐसी दूसरी कोई शक्ति या तप का बल नहीं है, जिससे मनुष्यों का संसारबंधन से छुटकारा हो सके। श्रीकृष्ण! यह सोचकर उन इन्द्र के समान तेजस्वी एवं कल्याणमयी बुद्धिवाले तण्डि मुनि ने गजचर्मधारी एवं समस्त कार्यकारण के स्वामी भगवान् शिव की स्तुति की।

तस्यैव च प्रसादेन भक्तिरुत्पद्यते नृणाम्।
येन यान्तिपरां सिद्धिं तद्भागवतचेतसः।।
ये सर्वभावानुगताः प्रपद्यन्ते महेश्वरम्।
प्रपन्नवत्सलो देवः संसारात् तान् समुद्धरेत्।।
एवमन्ये विकुर्वन्तिदेवाः संसारमोचनम्।

मनुष्याणामृते देवं नान्या शक्तिस्तपोबलम्।।
इति तेनेन्द्रकल्पेन भगवान् सदसत्पतिः।
कृत्तिवासाः स्तुतः कृष्ण तण्डिना शुभबुद्धिना।। (167 - 170)

भगवान् शंकर के इस स्तोत्र को ब्रह्माजी ने स्वयं अपने हृदय में धारण किया है। वे भगवान् शिव के समीप इस वेदतुल्य स्तुति का गान करते रहते हैं; अतः सबको इस स्तोत्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। यह परम पवित्र, पुण्यजनक तथा सर्वदा सब पापों का नाश करनेवाला है। यह योग, मोक्ष, स्वर्ग और संतोष - सब कुछ देनेवाला है। जो लोग अनन्यभक्तिभाव से भगवान् शिव के स्वरूपभूत इस स्तोत्र का पाठ करते हैं, उन्हें वही गति प्राप्त होती है, जो सांख्यवेत्ताओं और योगियों को मिलती है। जो भक्त भगवान् शंकर के समीप एक वर्षतक सदा प्रयत्नपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह मनोवाञ्छित फल प्राप्त कर लेता है। ब्रह्माजी ने इन्द्र को इसका उपदेश किया और इन्द्र ने मृत्यु को। मृत्यु ने एकादश रुद्रों को इसका उपदेश किया। रुद्रों से तण्डि को इसकी प्राप्ति हुई। तण्डि ने ब्रह्मलोक में ही बड़ी भारी तपस्या करके इसे प्राप्त किया था। माधव! तण्डि ने शुक्र को, शुक्र ने गौतम को और गौतम ने वैवस्वतमनु को इसका उपदेश दिया। वैवस्वत मनु ने समाधिनिष्ठ और ज्ञानी नारायण नामक किसी साध्यदेवता को यह स्तोत्र प्रदान किया। धर्म से कभी च्युत न होनेवाले उन पूजनीय नारायण नामक साध्यदेव ने यम को इसका उपदेश किया। वृष्णिनन्दन! ऐश्वर्यशाली वैवस्वत यम ने नाचिकेता को और नाचिकेताने मार्कण्डेय मुनि को यह स्तोत्र प्रदान किया। शत्रुसूदन जनार्दन! मार्कण्डेयजी से मैंने नियमपूर्वक यह स्तोत्र ग्रहण किया था। अभी इस स्तोत्र की अधिक प्रसिद्धि नहीं हुई है, अतः मैं तुम्हें इसका उपदेश देता हूँ। यह वेदतुल्य स्तोत्र स्वर्ग, आरोग्य, आयु तथा धन - धान्य प्रदान करनेवाला है।

श्रीकृष्ण कहते हैं – कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर! जो मनुष्य पवित्रभाव से ब्रह्मचर्य के पालनपूर्वक इन्द्रियों को संयम में रखकर एक वर्षतक योगयुक्त रहते हुए इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसे अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है।

(श्रीमहाभारत, अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व अ. - 17)

(6) शिवभक्ति एवं शिवसहस्रनाम की महिमा संबंधी ऋषियों का अनुभव

वैशम्पायनजी कहते हैं - जनमेजय! तदनन्तर मुनिवर व्यास ने युधिष्ठिर से कहा 'बेटा! तुम्हारा कल्याण हो। तुम भी इस स्तोत्र का पाठ करो, जिससे तुम्हारे ऊपर भी महेश्वर प्रसन्न हों। पुत्र! महाराज! पूर्वकाल की बात है, मैंने पुत्र की प्राप्ति के लिये मेरुपर्वत पर बड़ी भारी तपस्या की थी। उस समय मैंने इस स्तोत्र का अनेक बार पाठ किया था। पाण्डुनन्दन! इसके पाठ से मैंने अपनी मनोवाञ्छित कामनाओं को प्राप्त कर लिया था। उसी प्रकार तुम भी शंकरजी से सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर लोगे।' तत्पश्चात् वहाँ सांख्य के आचार्य देवसम्मानित कपिल ने कहा - 'मैंने भी अनेक जन्मोंतक भक्तिभाव से भगवान् शंकर की आराधना की थी। इससे प्रसन्न होकर भगवान् ने मुझे भवभयनाशक

ज्ञान प्रदान किया था।' तदनन्तर इन्द्र के प्रिय सखा आलम्बगोत्रीय चारूशीर्ष ने जो आलम्बायन नाम से ही प्रसिद्ध तथा परम दयालु हैं इस प्रकार कहा–

'पाण्डुनन्दन! पूर्वकाल में गोकर्णतीर्थ में जाकर मैंने सौ वर्षोंतक तपस्या करके भगवान् शंकर को संतुष्ट किया। इससे भगवान् शंकर की ओर से मुझे सौ पुत्र प्राप्त हुए, जो अयोनिज, जितेन्द्रिय, धर्मज्ञ, परम तेजस्वी, जरारहित, दुःखहीन और एक लाख वर्ष की आयुवाले थे।'

इसके बाद भगवान् वाल्मीकि ने राजा युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा–'भारत! एक समय अग्निहोत्री मुनियों के साथ मेरा विवाद हो रहा था। उस समय उन्होंने कुपित होकर मुझे शाप दे दिया कि 'तुम ब्रह्महत्यारे हो जाओ।' उनके इतना कहते ही मैं क्षणभर में उस अधर्म से व्याप्त हो गया। तब मैं पापरहित एवं अमोघ शक्तिवाले भगवान् शंकर की शरण में गया। इससे मैं उस पाप से मुक्त हो गया। फिर उन दुःखनाशन त्रिपुरहन्ता रुद्र ने मुझसे कहा, तुम्हें सर्वश्रेष्ठ सुयश प्राप्त होगा।'

इसके बाद धर्मात्माओं में श्रेष्ठ जमदग्निनन्दन परशुरामजी ऋषियों के बीच में खड़े होकर सूर्य के समान प्रकाशित होते हुए वहाँ कुन्तीकुमार युधिष्ठिर से इस प्रकार बोले– 'ज्येष्ठ पाण्डव! नरेश्वर! मैंने पितृतुल्य बड़े भाइयों को मारकर पितृवध और ब्राह्मणवध का पाप कर डाला था। इससे मुझे बड़ा दुःख हुआ और मैं पवित्र भाव से महादेवजी की शरण में गया। शरणागत होकर मैंने इन्हीं नामों से रुद्रदेव की स्तुति की। इससे भगवान् महादेव मुझपर बहुत संतुष्ट हुए और मुझे अपना परशु एवं दिव्यास्त्र देकर बोले–'तुम्हें पाप नहीं लगेगा। तुम युद्ध में अजेय हो जाओगे। तुमपर मृत्यु का वश नहीं चलेगा तथा तुम अजर–अमर बने रहोगे।' इस प्रकार कल्याणमय विग्रहवाले जटाधारी भगवान् शिव ने मुझसे जो कुछ कहा, वह सब कुछ उन ज्ञानीमहेश्वर के कृपाप्रसाद से मुझे प्राप्त हो गया।'

तदनन्तर विश्वामित्रजी ने कहा, 'राजन्! जिस समय मैं क्षत्रिय था, उन दिनों की बात है, मेरे मन में यह दृढ़ संकल्प हुआ कि मैं ब्राह्मण हो जाऊँ–यही उद्देश्य लेकर मैंने भगवान् शंकर की आराधना की और उनकी कृपा से मैंने अत्यन्त दुर्लभ ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया।' तत्पश्चात् असित देवल ने पाण्डुकुमार राजा युधिष्ठिर से कहा–'कुन्तीनन्दन! प्रभो! इन्द्र के शाप से मेरा धर्म नष्ट हो गया था; किंतु भगवान् शंकर ने ही मुझे धर्म, उत्तम यश तथा दीर्घ आयु प्रदान की।' इसके बाद इन्द्र के प्रिय सखा और बृहस्पति के समान तेजस्वी मुनिवर भगवान् गृत्समद ने अजमीढवंशी युधिष्ठिर से कहा–"चाक्षुष मनु के पुत्र भगवान् वरिष्ठ के नाम से प्रसिद्ध हैं। एक समय अचिन्त्य शक्तिशाली शतक्रतु इन्द्र का एक यज्ञ हो रहा था, जो एक हजार वर्षोंतक चलनेवाला था; उसमें मैं रथन्तर साम का पाठ कर रहा था। मेरे द्वारा उस सामका उच्चारण होनेपर वरिष्ठ ने मुझसे कहा–'द्विजश्रेष्ठ! तुम्हारे द्वारा रथन्तर साम का पाठ ठीक नहीं हो रहा है। विप्रवर! तुम पापपूर्ण आग्रह छोड़कर फिर अपनी बुद्धि से विचार करो। सुदुर्मते! तुमने ऐसा पाप कर डाला है, जिससे यह यज्ञ ही निष्फल हो गया है।' ऐसा कहकर महाक्रोधी वरिष्ठ ने भगवान् शंकर की ओर देखते हुए फिर कहा–'तुम ग्यारह हजार आठ

सौ वर्षोंतक जल और वायु से रहित तथा अन्य पशुओं से परित्यक्त केवल रुरु तथा सिंहों से सेवित जो यज्ञों के लिये उचित नहीं है ऐसे वृक्षों से भरे हुए विशालवन में बुद्धिशून्य, दुखी, सर्वदा भयभीत, वनचारी और महान् कष्ट में मग्न क्रूर स्वभाववाले पशु होकर रहोगे।' कुन्तीनन्दन! उनका यह वाक्य पूरा होते ही मैं क्रूर पशु हो गया। तब मैं भगवान् शंकर की शरण में गया। अपनी शरण में आये हुए मुझ सेवक से योगी महेश्वर इस प्रकार बोले – 'मुने! तुम अजर – अमर और दुःखरहित हो जाओगे। तुम्हें मेरी समानता प्राप्त हो और तुम दोनों यजमान और पुरोहित का यह यज्ञ सदा बढ़ता रहे।' इस प्रकार सर्वव्यापी भगवान् शंकर सबके ऊपर अनुग्रह करते हैं। ये ही सबका अच्छे ढंग से धारण – पोषण करते हैं और सर्वदा सबके सुख – दुःख का भी विधान करते हैं। तात! समरभूमि के श्रेष्ठ वीर! ये अचिन्त्य भगवान् शिव मन, वाणी तथा क्रिया द्वारा आराधना करने योग्य हैं। उनकी आराधना का ही यह फल है कि पाण्डित्य में मेरी समानता करनेवाला आज कोई नहीं हैं।"

उस समय बुद्धिमानों में श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्ण फिर इस प्रकार बोले – "मैने सुवर्ण – जैसे नेत्रवाले महादेवजी को अपनी तपस्या से संतुष्ट किया। युधिष्ठिर! तब भगवान् शिव ने मुझसे प्रसन्नतापूर्वक कहा – 'श्रीकृष्ण! तुम मेरी कृपा से प्रिय पदार्थों की अपेक्षा भी अत्यन्त प्रिय होओगे। युद्ध में तुम्हारी कभी पराजय नहीं होगी तथा तुम्हें अग्नि के समान दुस्सह तेज की प्राप्ति होगी।' इस तरह महादेवजी ने मुझे और भी सहस्त्रों वर दिये। पूर्वकाल में अन्य अवतारों के समय मणिमन्थ पर्वत पर मैंने लाखों – करोड़ों वर्षोंतक भगवान् शंकर की आराधना की थी। इससे प्रसन्न होकर भगवान् ने मुझसे कहा – 'कृष्ण! तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारे मन में जैसी रुचि हो, उसके अनुसार कोई वर माँगो।' यह सुनकर मैंने मस्तक झुकाकर प्रणाम किया और कहा – 'यदि मेरी परम भक्ति से भगवान् महादेव प्रसन्न हों तो ईशान! आपके प्रति नित्य – निरन्तर मेरी स्थिर भक्ति बनी रहे।' तब 'एवमस्तु' कहकर भगवान् शिव वहीं अन्तर्धान हो गये।"

जैगीषव्य बोले – 'युधिष्ठिर! पूर्वकाल में भगवान् शिव ने काशीपुरी के भीतर अन्य प्रबल प्रयत्न से संतुष्ट हो मुझे अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ प्रदान की थी।'

गर्ग ने कहा – 'पाण्डुनन्दन! मैंने सरस्वती के तटपर मानस यज्ञ करके भगवान् शिव को संतुष्ट किया था। इससे प्रसन्न होकर उन्होंने मुझे चौंसठ कलाओं का अद्‌भुत ज्ञान प्रदान किया। मुझे मेरे ही समान एक सहस्त्र ब्रह्मवादी पुत्र दिये तथा पुत्रोंसहित मेरी दस लाख वर्ष की आयु नियत कर दी।'

पराशरजी ने कहा – "नरेश्वर! पूर्वकाल में यहाँ मैंने महादेवजी को प्रसन्न करके मन – ही – मन उनका चिन्तन आरम्भ किया। मेरी इस तपस्या का उद्‌देश्य यह था कि मुझे महेश्वर की कृपा से महातपस्वी, महातेजस्वी, महायोगी, महायशस्वी, दयालु, श्रीसम्पन्न एवं ब्रह्मनिष्ठ वेदव्यासनामक मनोवाञ्छित पुत्र प्राप्त हो। मेरा ऐसा मनोरथ जानकर सुरश्रेष्ठ शिव ने मुझसे कहा 'मुने! तुम्हारी मेरे प्रति जो सम्भावना है अर्थात् जिस वर को पाने की लालसा है, उसी से तुम्हें कृष्ण नामक पुत्र प्राप्त होगा। सावर्णिक मन्वन्तर के समय जो सृष्टि होगी, उसमें तुम्हारा यह पुत्र सप्तर्षि

के पदपर प्रतिष्ठित होगा तथा इस वैवस्वत मन्वन्तर में यह वेदों का वक्ता, कौरव – वंश का प्रवर्तक, इतिहास का निर्माता, जगत् का हितैषी तथा देवराज इन्द्र का परमप्रिय महामुनि होगा। पराशर! तुम्हारा वह पुत्र सदा अजर – अमर रहेगा।' युधिष्ठिर! ऐसा कहकर महायोगी, शक्तिशाली, अविनाशी और निर्विकार भगवान् शिव वहीं अन्तर्धान हो गये।"

माण्डव्य बोले – "नरेश्वर! मैं चोर नहीं था तो भी चोरीके संदेह में मुझे शूली पर चढ़ा दिया गया। वहीं से मैंने महादेवजी की स्तुति की। तब उन्होंने मुझसे कहा – 'प्रियवर! तुम शूल से छुटकारा पा जाओगे और दस करोड़ वर्षोंतक जीवित रहोगे। तुम्हारे शरीर में इस शूल के धँसने से कोई पीड़ा नहीं होगी। तुम आधि – व्याधि से मुक्त हो जाओगे। मुने! तुम्हारा यह शरीर धर्म के चौथे पाद सत्य से उत्पन्न हुआ है। अतः तुम अनुपम सत्यवादी होओगे। जाओ, अपना जन्म सफल करो। ब्रह्मन्! तुम्हें बिना किसी विघ्न – बाधा के सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान का सौभाग्य प्राप्त होगा। मैं तुम्हारे लिये अक्षय एवं तेजस्वी स्वर्गलोक प्रदान करता हूँ।' महाराज! ऐसा कहकर कृत्तिवासा, महातेजस्वी, वृषभ – वाहन तथा वरणीय सुरश्रेष्ठ भगवान् महेश्वर अपने गणों के साथ वहीं अन्तर्धान हो गये।"

गालवजी ने कहा – "राजन्! विश्वामित्र मुनि की आज्ञा पाकर मैं अपने पिताजी का दर्शन करने के लिये घर पर आया। उस समय मेरी माता वैधव्य के दुःख से दुखी हो जोर – जोर से रोती हुई मुझसे बोली – 'तात! अनघ! कौशिक मुनि की आज्ञा लेकर घर पर आये हुए वेदविद्या से विभूषित तुझ तरुण एवं जितेन्द्रय पुत्र को तुम्हारे पिता नहीं देख सके।' माता की बात सुनकर मैं पिता के दर्शन से निराश हो गया और मन को संयम में रखकर महादेवजी की आराधना करके उनका दर्शन किया। उस समय वे मुझसे बोले – 'वत्स! तुम्हारे पिता, माता और तुम तीनों ही मृत्यु से रहित हो जाओगे। अब तुम अपने घर में शीघ्र प्रवेश करो। वहाँ तुम्हें पिता का दर्शन प्राप्त होगा।' तात युधिष्ठिर! भगवान् शिव की आज्ञा से मैंने पुनः घर जाकर वहाँ यज्ञ करके यज्ञशाला से निकले हुए पिता का दर्शन किया। वे उस समय समिधा, कुश और वृक्षों से अपने – आप गिरे हुए पके फल आदि हव्य पदार्थ लिये हुए थे। पाण्डुनन्दन! उन्हें देखते ही मैं उनके चरणों में पड़ गया; फिर पिताजी ने भी उन समिधा आदि वस्तुओं को अलग रखकर मुझे हृदय से लगा लिया और मेरा मस्तक सूँघकर नेत्रों से आँसू बहाते हुए मुझसे कहा – 'बेटा! बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम विद्वान् होकर घर आ गये और मैंने तुम्हें भर आँख देख लिया।'"

वैशम्पायनजी कहते हैं – जनमेजय! मुनियों के कहे हुए महादेवजी के ये अद्‌भुत चरित्र सुनकर पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर को बड़ा विस्मय हुआ। फिर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण ने धर्मनिधि युधिष्ठिर से कहा।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले – राजन्! सूर्य के समान तपते हुए – से तेजस्वी उपमन्यु ने मेरे समीप कहा था कि 'जो पापकर्मी मनुष्य अपने अशुभ आचरणों से कलुषित हो गये हैं, वे तमोगुणी या रजोगुणी

वृत्ति के लोग भगवान् शिव की शरण नहीं लेते हैं। जिनका अन्त:करण पवित्र है, वे ही द्विज महादेवजी की शरण लेते हैं। जो परमेश्वर शिव का भक्त है, वह सब प्रकार से बर्तता हुआ भी पवित्र अन्त:करणवाले वनवासी मुनियों के समान है। भगवान् रुद्र संतुष्ट हो जायँ तो वे ब्रह्मपद, विष्णुपद, देवताओंसहित देवेन्द्रपद अथवा तीनों लोकों का आधिपत्य प्रदान कर सकते हैं। तात! जो मनुष्य मन से भी भगवान् शिव की शरण लेते हैं, वे सब पापों का नाश करके देवताओं के साथ निवास करते हैं। बारंबार तालाब के तटभूमि को खोद-खोदकर उन्हें चौपट कर देनेवाला और इस सारे जगत् को जलती आग में झोंक देनेवाला पुरुष भी यदि महादेवजी की आराधना करता है तो वह पाप से लिप्त नहीं होता है। समस्त लक्षणों से हीन अथवा सब पापों से युक्त मनुष्य भी यदि अपने हृदय से भगवान् शिव का ध्यान करता है तो वह अपने सारे पापों को नष्ट कर देता है। केशव! कीट, पंतग, पक्षी तथा पशु भी यदि महादेवजी की शरण में आ जायँ तो उन्हें भी कहीं किसी का भय नहीं प्राप्त होता है। इसी प्रकार इस भूतलपर जो मानव महादेवजी के भक्त हैं, वे संसार के अधीन नहीं होते-यह मेरा निश्चित विचार है।' तदनन्तर भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वयं भी धर्मपुत्र युधिष्ठिर से कहा-

आदित्यचन्द्रावनिलानलौ च द्यौर्भूमिरापो वसवोऽथ विश्वे।
धातार्यमा शुक्रबृहस्पती च रुद्राः ससाध्या वरुणोऽथ गोपः।।
ब्रह्मा शक्रो मारुतो ब्रह्म सत्यं वेदा यज्ञा दक्षिणा वेदवाहाः।
सोमो यष्टा यच्च हव्यं हविश्च रक्षादीक्षा संयमा ये च केचित्।।
स्वाहा वौषट् ब्राह्मणाः सौरभेयी धर्मं चाग्र्यं कालचक्रं बलं च।
यशो दमो बुद्धिमतां स्थितिश्च शुभाशुभं ये मुनयश्च सप्त।।
अग्र्या बुद्धिर्मनसा दर्शने च स्पर्शश्चाग्र्यः कर्मणां या च सिद्धिः।
गणा देवानामूष्मपा : सोमपाश्च लेखाः सुयामास्तुषिता ब्रह्मकायाः।।
आभासुरा गन्धपा धूमपाश्च वाचा विरुद्धाश्च मनोविरुद्धाः।
शुद्धाश्च निर्माणरताश्च देवाः स्पर्शाशना दर्शपा आज्यपाश्च।।
चिन्त्यद्योता ये च देवेषु मुख्या ये चाप्यन्ये देवताश्चाजमीढ।
सुपर्णगन्धर्वपिशाचदानवा यक्षास्तथा चारणपन्नगाश्च।।
स्थूलं सूक्ष्मं मृदु चाप्यसूक्ष्मं दुःखं सुखं दुःखमनन्तरं च।
सांख्यं योगं तत्पराणां परं च शर्वाज्जातं विद्धि यत् कीर्तितं मे।। (71-77)

"अजमीढवंशी धर्मराज! जो सूर्य, चन्द्रमा, वसु, अग्नि, स्वर्ग, भूमि, जल, वायु, विश्वदेव, धाता, अर्यमा, शुक्र, बृहस्पति, रुद्रगण, साध्यगण, राजा वरुण, ब्रह्मा, इन्द्र, वायुदेव, ॐकार, सत्य, वेद, यज्ञ, दक्षिणा, वेदपाठी, ब्राह्मण, सोमरस, यजमान, हवनीय हविष्य, रक्षा, दीक्षा, सब प्रकार के संयम, स्वाहा, वौषट्, ब्राह्मणगण, गौ, श्रेष्ठ धर्म, कालचक्र, बल, यश, दम, बुद्धिमानों की स्थिति, शुभाशुभ कर्म, सप्तर्षि,

श्रेष्ठ बुद्धि, मन, दर्शन, श्रेष्ठ स्पर्श, कर्मों की सिद्धि, ऊष्मप, सोमप, लेख, याम तथा तुषित आदि देवगण, ब्राह्मण – शरीर, दीप्तिशाली गन्धप, धूमप ऋषि, वाग्विरुद्ध और मनोविरुद्ध भाव, शुद्धभाव, निर्माण – कार्य में तत्पर रहनेवाले देवता, स्पर्शमात्र से भोजन करनेवाले, दर्शनमात्र से पेय रस का पान करनेवाले, घृत पीनेवाले हैं, जिनके संकल्प करनेमात्र से अभीष्ट वस्तु नेत्रों के समक्ष प्रकाशित होने लगती है, ऐसे जो देवताओं में मुख्य गण हैं, जो दूसरे – दूसरे देवता हैं, जो सुपर्ण, गन्धर्व, पिशाच, दानव, यक्ष, चारण तथा नाग हैं, जो स्थूल, सूक्ष्म, कोमल, असूक्ष्म, सुख, इस लोक के दुःख, परलोक के दुःख, सांख्य, योग एवं पुरुषार्थों में श्रेष्ठ मोक्षरूप परम पुरुषार्थ बताया गया है; इन सबको तुम महादेवजी से ही उत्पन्न हुआ समझो।"

तत्सम्भूता भूतकृतो वरेण्याः सर्वे देवा भुवनस्यास्य गोपाः।
अविश्येमां धरणीं येऽभ्यरक्षन् पुरातनीं तस्य देवस्य सृष्टिम्।। (78)

जो इस भूतल में प्रवेश करके महादेवजी की पूर्वकृत सृष्टि की रक्षा करते हैं, जो समस्त जगत् के रक्षक, विभिन्न प्राणियों की सृष्टि करनेवाले और श्रेष्ठ हैं, वे सम्पूर्ण देवता भगवान शिव से ही प्रकट हुए हैं।

विचिन्वन्तस्तपसा तत्स्थवीयः किंचित् तत्त्वं प्राणहेतोर्नतोऽस्मि।
ददातु देवः स वरानिहेष्टानाभिष्टुतो नः प्रभुरव्ययः सदा।। (79)

ऋषि – मुनि तपस्या द्वारा जिसका अन्वेषण करते हैं, उस सदा स्थिर रहनेवाले अनिर्वचनीय परम सूक्ष्म तत्त्वस्वरूप सदाशिव को मैं जीवन – रक्षा के लिये नमस्कार करता हूँ। जिन अविनाशी प्रभु की मेरे द्वारा सदा ही स्तुति की गयी है, वे महादेव यहाँ मुझे अभीष्ट वरदान दें।

जो पुरुष इन्द्रियों को वश में करके पवित्र होकर इस स्तोत्र का पाठ करेगा और नियमपूर्वक एक मासतक अखण्ड रूप से इस पाठ को चलाता रहेगा, वह अश्वमेधयज्ञ का फल प्राप्त कर लेगा। कुन्तीनन्दन! ब्राह्मण इसके पाठ से सम्पूर्ण वेदों के स्वाध्याय का फल पाता है। क्षत्रिय समस्त पृथ्वी पर विजय प्राप्त कर लेता है। वैश्य व्यापारकुशलता एवं महान् लाभ का भागी होता है और शूद्र इहलोक में सुख तथा परलोक में सद्गति पाता है। जो लोग सम्पूर्ण दोषों का नाश करनेवाले इस पुण्यजनक पवित्र स्तवराज का पाठ करके भगवान् रुद्र के चिन्तन में मन लगाते हैं, वे यशस्वी होते हैं। भरतनन्दन! मनुष्य के शरीर में जितने रोमकूप होते हैं, इस स्तोत्र का पाठ करनेवाला मनुष्य उतने ही हजार वर्षोंतक स्वर्ग में निवास करता है।

(इस प्रकार श्रीमहाभारत अनुशासनपर्व के अन्तर्गत दानधर्मपर्व में मेघवाहनपर्व की कथाविषयक अठारहवाँ अध्याय पूरा हुआ।)

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ